

समाज विकासमाला

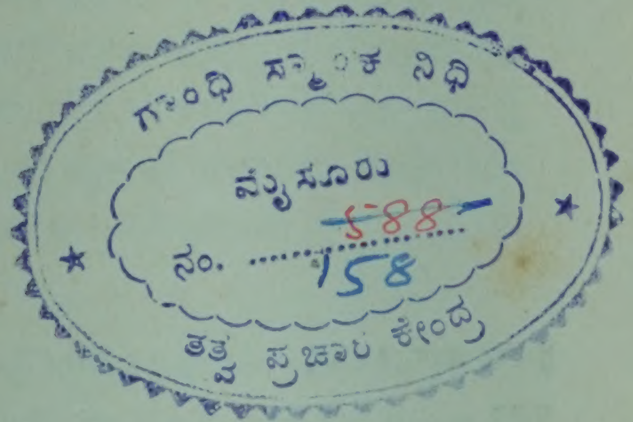
हज़रत उमर

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

समाज-विकास-माला : ३०

हज़रत उमर

महान खलीफ़ा के सेवामय जीवन की कहानी



लेखक
विष्णु प्रभाकर

सम्पादक
यशपाल जैन

१९५६

सस्ता साहित्य मण्डल-प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मण्डल
नई दिल्ली

दूसरी बार १९५६
मूल्य
छः आना

मुद्रक
नेशनल प्रिंटिंग वर्क्स
दिल्ली

समाज-विकास-माला

हमारे देश के सामने आज सबसे बड़ी समस्या करोड़ों आदमियों की शिक्षा की है। इस दिशा में सरकार की ओर से यदि कुछ कोशिश हो रही है तो वही काफी नहीं है। यह बड़ा काम सबकी सहायता के बिना पार नहीं पड़ सकेगा। बालकों तथा प्रौढ़ों की पढ़ाई की तरफ जबसे ध्यान गया है, ऐसी किताबों की मांग बढ़ गई है, जो बहुत ही आसान हों, जिनके विषय रोचक हों, जिनकी भाषा मुहावरेदार और बोलचाल की हो और जो मोटे टाइप में बढ़िया छपी हों।

इस पुस्तक-माला को हमने इन्हीं बातों को सामने रखकर चालू किया है। इसमें से कई पुस्तकें निकल चुकी हैं। इन सबकी भाषा बड़ी आसान है। विषयों का चुनाव सावधानी से किया गया है। छपाई-सफाई के बारे में भी विशेष ध्यान रक्खा गया है। हर किताब में चित्र भी देने की कोशिश की है।

यदि पुस्तकों की भाषा, शैली, विषय और छपाई में पाठकों को सुधार की गुंजाइश मालूम हो तो उसकी सूचना निस्संकोच देने की कृपा करें।

दूसरा संस्करण

बड़े हर्ष की बात है कि इस पुस्तक का दूसरा संस्करण इतनी जल्दी प्रकाशित हो रहा है। इस माला की सभी पुस्तकें पाठकों को पसन्द आ रही हैं, इससे हमें आनन्द होता है। हमें विश्वास है कि इन सामयिक और उपयोगी पुस्तकों को पाठक चाव से पढ़ेंगे और इनके प्रचार में हाथ बटायंगे।

—मंत्री

पाठकों से

हज़रत उमर मुसलमानों के बहुत बड़े ख़लीफ़ा हुए हैं। उनका नाम बड़ा था, काम उससे भी बड़ा था। बड़े होकर, ऊँचे ओहदे पर पहुँचकर भी उनका रहन-सहन सीधा-सादा रहा और वह हमेशा दूसरों की सेवा में लगे रहे। किसी भी काम को उन्होंने छोटा नहीं माना।

इस किताब में आपको उनके जीवन की और सेवाओं की बहुत अच्छी-अच्छी बातें पढ़ने को मिलेंगी। इन्हें पढ़कर आपको लगेगा कि बड़ा वह नहीं है, जो ऊँचे ओहदे पर बैठता है, बल्कि वह है जो दूसरों की सेवा करता है।

आप इस पुस्तक को ध्यान से पढ़ें और दूसरों को पढ़वायें। इतनी रोचक और सीख देनेवाली किताब आपको दूसरी मुश्किल से मिलेगी।

—सम्पादक

हज़रत उमर

: १ :

रात का समय था। सारा मदीना शहर सोया पड़ा था। उसी समय हज़रत उमर शहर से बाहर निकले। तीन मील जाने के बाद एक औरत दिखाई दी। वह कुछ पका रही थी। पास ही दो-तीन बच्चे रो रहे थे। हज़रत उमर ने उस औरत से पूछा, "ये बच्चे क्यों रो रहे हैं ?" औरत ने जवाब दिया, "भूखे हैं। कई दिन से खाना नहीं मिला। आज भी कुछ नहीं है। खाली हांडी में पानी डाल कर पका रही हूं।"

हज़रत ने पूछा, "ऐसा क्यों कर रही हो ?"

औरत ने जवाब दिया, "बच्चों का मन बहलाने के लिए।"

हज़रत उमर तड़प उठे। उसी समय वापस लौटे। खजाने से घी, आटा और खजूरें लीं। नौकर से बोले, "इन्हें मेरी पीठ पर बांध दो।" नौकर ने कहा, "यह आप क्या कर रहे हैं ? मैं ले चलता हूं।" हज़रत उमर ने जवाब दिया, "कयामत में मेरा बोझ तुम नहीं उठाओगे।"

सब चीजें वह खुद लाद कर ले चले। उसी औरत के पास पहुंचे। उसने ये चीजें देखीं तो बहुत खुश हुई। जल्दी-जल्दी आटा गूंधा। हांडी चढ़ाई। हज़रत उमर चूल्हा फूंकने लगे। खाना तैयार हुआ। बच्चों ने पेट भर कर खाया। खाकर उछलने-कूदने लगे। हज़रत उमर देखते थे, खूब खुश होते थे। मां भी बहुत खुश थी। बार-बार दुआएं दे रही थी। कहती थी, "खलीफ़ा तुमको होना चाहिए। उमर इस काबिल नहीं है।"

बेचारी गरीब मां! उसे कौन बताता कि वह किस-से बातें कर रही है।

एक रात उमर फिर ऐसे ही घूम रहे थे। देखा—एक बद्दू अपने खेमे के बाहर बैठा हुआ है। वह भी उसके पास जा बैठे। इधर-उधर की बातें होने लगीं। बीच-बीच में कहीं से रोने की आवाज आ रही थी। पता लगा कि खेमे के भीतर कोई रो रहा है। पूछा, "कौन रो रहा है?"

बद्दू ने जवाब दिया, "मेरी बीवी।"

"क्या बात है?"

"बच्चा होनेवाला है।"

"क्या वह अकेली है?"

"हां।"

हज़रत उमर घर लौटे। अपनी बीवी को साथ लिया। फिर वहीं आये। रोने की आवाज उसी तरह आ रही थी। बद्दू से बोले, "यह मेरी बीवी है। तुम कहो तो यह भीतर चली जाय।"

नेकी और पूछ-पूछ ! बद्दू बहुत खुश हुआ। हज़रत उमर की बीवी भीतर चली गई। कुछ देर बाद बच्चा पैदा हुआ। भीतर से ही उनकी बीवी ने पुकारा, "अमीरुल मोमनीन, अपने साथी को बधाई दो।"

बद्दू चौंक पड़ा—"क्या कहा, अमीरुल मोमनीन ! क्या यह मोमीनों के नेता, खलीफ़ा, हज़रत उमर हैं ?" वह हाथ जोड़ने लगा। हज़रत उमर बोले, "नहीं, कोई बात नहीं। कल मेरे पास आना। बच्चे के लिए वजीफा बांध दूंगा।"

एक रात घूमते-घूमते उनके कानों में गाने की आवाज आई। बड़ा दर्द-भरा गाना था। एक औरत अपनी खिड़की पर बैठी हुई गा रही थी—"रात काली है और लम्बी होती जाती है। मेरा मालिक मेरे पास नहीं है . . .।" उस औरत का मालिक लड़ाई पर गया हुआ था। उसीकी याद में वह गा रही थी। यह गाना सुनकर हज़रत उमर बहुत दुखी हुए। सोचने लगे—"मैं अरब की औरतों पर जुल्म कर रहा हूं।"

और वह सोच कर ही नहीं रह गये, तुरन्त हज़रत हफसा के पास आये। पूछा, "औरत अपने मालिक के बिना कितने दिन रह सकती है ?"

जवाब मिला, "चार महीने।"

सुबह होते ही हज़रत उमर ने हर जगह आदेश भेज दिया कि कोई भी सिपाही चार महीने से ज्यादा बाहर न रहे।

एक बार वह लोगों को खाना खिला रहे थे। देखा कि एक आदमी बांये हाथ से खाना खा रहा है। वह उसके पास पहुंचे। बोले, "दाहिने हाथ से खाओ।"

उसने जवाब दिया, "दाहिना हाथ नहीं है। वह लड़ाई में जाता रहा।"

उनका दिल भर आया। आँखों से आँसू बहने लगे। वहीं उसके पास बैठ गये। बोले, "अफसोस ! तुमको वज़ू कौन कराता होगा ? सिर कौन धोता होगा ? कपड़े कौन पहनाता होगा ?"

बाद में उसके लिए एक नौकर तैनात कर दिया। जरूरी चीजें अपने पास से दीं।

× × ×

हज़रत उमर इस्लाम के दूसरे खलीफ़ा थे। खलीफ़ा राजा भी होते थे और पोप भी। वह राज भी

करते थे और धर्म की रक्षा भी। वह बहुत बड़े थे। राज करने में भी बड़े थे। धर्म फैलाने में भी बड़े थे। वह देश पर राज करते थे। देश के लोगों पर राज करते थे। लोगों के दिलों पर राज करते थे। जो दिलों पर राज करता है वही बड़ा है। ये कहानियाँ इस बात की गवाह हैं।

हज़रत मोहम्मद इस्लाम के पैगम्बर थे। पैगम्बर ईश्वर का सन्देश लानेवाला होता है। उन्होंने एक ईश्वर की पूजा का प्रचार किया। उन्होंने अरबों को एक कौम बनाया। उनके उपदेशों का सार था—एक ईश्वर की पूजा करो। सब भाई-भाई हैं। कोई ऊँचा है, न नीचा। बुरे कामों से बचो। नेक कामों में लगो। इसीका नाम उन्होंने इस्लाम रखा। इसका मतलब है—अपनेको भगवान को सौंप देना।

उस जमाने के लोग बड़े खराब थे। इन बातों का विरोध करते थे। वे बहुत-से देवी-देवताओं को मानते थे। आपस में लड़ते रहते थे। बुरे-बुरे काम करते, शराब पीते, जुआ खेलते, लड़कियों को मार डालते, पशु-बलि और नरबलि चढ़ाते। कुछ लोग तो अपने बेटों की बलि भी चढ़ा देते थे। छुआछूत भी थी। ये सब लोग कबीलों में बँटे हुए थे।

मक्के में उन दिनों सबसे बड़ा कबीला कुरैश का था। उनका सरदार मक्के पर राज करता था। वही काबे का रखवाला था। ये लोग नये धर्म के विरोधी थे। सब बराबर हैं—ये इस बात को नहीं मानते थे। शुरू में उन लोगों ने मोहम्मद साहब को लालच दिया, पर वह नहीं माने। इसपर वे मोहम्मद साहब और उनके साथियों को सताने लगे।

हज़रत उमर भी कुरैश थे। वह बहुत बहादुर थे। उनका डीलडौल बड़ा ऊँचा था। हजारों आदमियों में अलग दिखाई दे जाते। वह भी मोहम्मद साहब के खिलाफ थे, लेकिन उनके बहनोई सईद मुसलमान हो चुके थे। उनके साथ उमर की बहन फातिमा भी मुसलमान हो गई थी। कई दूसरे लोग भी मुसलमान हो गये थे। उनमें उनके घराने की एक दासी थी। उमर मुसलमानों के बैरी थे। वह उस दासी को खूब मारते थे। मारते-मारते थक जाते तो कहते, "जरा दम ले लूं तो फिर मारूंगा।"

वह दूसरे लोगों को भी सताते थे, लेकिन नये धर्म का नशा बड़ा तेज था। जिसपर चढ़ जाता था, उतरता नहीं था। उमर बड़े परेशान हुए। एक भी आदमी धर्म नहीं छोड़ता। आखिर उन्होंने

मोहम्मद साहब को मार डालने का फैसला किया। न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी। बस, कमर में तलवार बाँधी और घर से निकल पड़े।

राह में एक साथी मिल गये। इनके तेवर चढ़े देखे तो पूछा, "किधर जा रहे हैं ?"

जवाब दिया, "मोहम्मद का फैसला करने।"

साथी ने कहा, "पहले घर की खबर लो। तुम्हारी बहन और बहनोई दोनों इस्लाम को मान चुके हैं।"

उमर तुरन्त लौट पड़े। उसी तरह बहन के घर पहुँचे। बहन कुरआन पढ़ रही थी। आहट पाकर चुप हो गई। कुरआन छिपा दी; लेकिन आवाज उमर के कानों में पड़ चुकी थी। पूछा, "क्या पढ़ रही थी ?"

बहन ने जवाब दिया, "कुछ नहीं।"

बोले, "मैं सुन चुका हूँ। तुम दोनों मुसलमान हो गये हो।"

यह कहकर वह बहनोई की तरफ झपटे। वह उनको मारना चाहते थे। बहन बचाने दौड़ी। उमर ने उसका चेहरा भी लहूलुहान कर दिया। पर वह डरी नहीं, झिझकी तक नहीं। बोली, "उमर, जो जी में

आवे करो ।"

उमर का हाथ रुक गया । उन्होंने अपनी बहन को देखा । उसके चेहरे पर एक भी शिकन नहीं थी । नफरत नहीं थी । डर नहीं था । आँखों में वही प्यार था । वह कह रही थी, "तू हमें इसलिए मारता है कि हम एक खुदा को मानते हैं । हाँ, मैं कहती हूँ— खुदा एक है, दूसरा कोई नहीं है । मोहम्मद उसका रसूल है । ले, अब मार डाल ।"

उमर का दिल धड़कने लगा । इतने निडर, इतने साहसी हैं ये लोग ! मौत से भी नहीं घबराते । इस्लाम में इतनी ताकत है । उन्होंने फिर बहन की तरफ देखा । उसके बदन से अब भी खून बह रहा था । उमर का दिल भर आया । आँखों में प्यार झलकने लगा । बोले, "तुम जो पढ़ रही थीं, मुझे भी सुनाओ ।"

फातिमा कुरआन ले आई । उमर उसे पढ़ने लगे, गौर से पढ़ने लगे । एक बार पढ़ा, दो बार पढ़ा, बार-बार पढ़ा । पढ़ चुके तो पुकार उठे, "अल्लाह एक है । मोहम्मद उसका रसूल है ।"

इसके बाद बहन और बहनोई से माफी माँगी । फिर हज़रत मोहम्मद के पास पहुँचे । दरवाजा खट-खटाया । किसीको भी इस नई कहानी का पता न था ।

कमर में तलवार बंध रही थी। वहाँ जो लोग थे, वे कुछ घबराये। लेकिन मोहम्मद साहब बोले, "आने दो। नीयत साफ है तो ठीक है, नहीं तो उसीकी तलवार से सिर काट दूंगा।"

उमर भीतर आये। मोहम्मद साहब आगे बढ़े। उनका दामन पकड़कर बोले, "क्यों उमर, कैसे आये हो ?"

उमर काँपने लगे। बोले, "ईमान लाने के लिए।"

यह सुनना था कि सब लोग एकदम पुकार उठे, "अल्लाहो अकबर !"

यह पुकार बड़ी तेज थी, इतनी तेज कि मक्का की तमाम पहाड़ियाँ गूंज उठीं। क्यों न गूँजतीं, उमर मोहम्मद के साथ मिल गये थे। उमर कुरैश के एक बहुत बड़े सरदार थे। उमर इस्लाम के भी बड़े आदमी हुए।

अबतक मुसलमान छिप कर रहते थे। छिप कर नमाज पढ़ते थे, लेकिन उमर नहीं छिपे। सबके सामने उन्होंने ऐलान किया, "मैं मुसलमान हो गया हूँ।" शुरू-शुरू में उनको भी सताया गया, पर वह दबनेवाले नहीं थे। उन्होंने काबे में जाकर नमाज़ पढ़ी। उन्होंने कुरैश सरदारों से लोहा लिया। उन्होंने मोहम्मद साहब

का बराबर साथ दिया।

: २ :

हज़रत उमर के पिता का नाम ख़ताब था। वह कुरैश के एक बड़े सरदार थे। उनकी माँ भी बड़े कुल की थीं। जब उमर पैदा हुए तो बड़ी खुशी मनाई गई, पर उनका बचपन कैसे बीता, इसका कुछ ठीक-ठीक पता नहीं लगता। बड़े होने पर पिता ने ऊँट चराने का काम सौंपा। वह उमर से बड़ी बेरहमी का सलूक करते। दिन भर ऊँट चरवाते। थक जाते तो सजा देते। जब वह खलीफा बने तो इधर आये। उस मैदान को देखा, जहाँ ऊँट चराते थे। पुरानी बातें याद आगईं। बोले, "एक वह जमाना था जब मैं नम्दे का कुरता पहने ऊँट चराता था। थक कर बैठ जाता तो बाप के हाथ से मार खाता। आज यह दिन है कि खुदा के सिवा मेरे ऊपर और कोई हाकिम नहीं।"

हज़रत उमर बड़े पहलवान थे। वह दंगलों में कुश्ती लड़ा करते थे। अच्छे घुड़सवार भी थे। शायर भी थे। बड़े-बड़े शायरों के बहुत-से शेर याद थे। वह बोलते भी बहुत अच्छा थे। नसबदानी (वंशावली याद रखने की कला) उनकी बपौती थी। उस जमाने में पढ़े-लिखे लोग बहुत कम थे, पर उमर ने

पढ़ना-लिखना सीखा था। कुरैश के कबीले में कुल सत्रह आदमी पढ़े-लिखे थे। उमर उनमें एक थे।

अरब के लोग अधिकतर तिजारत करते थे। उमर भी तिजारत करते थे। दूर-दूर के देशों में जाते थे। बड़े-बड़े लोगों से मिलते थे। वह साहसी, स्वाभिमानी अनुभवी और बात की तहतक पहुँच जानेवाले थे। ये गुण उनमें मुसलमान होने से पहले ही थे। ये गुण उन्हें खूब घूमने के कारण ही मिले थे। इन्हीं गुणों के कारण कुरैश ने उन्हें अपना दूत नियत किया। जहाँ कहीं भेजना होता, उनको ही भेजते।

इन्हीं गुणों के कारण हज़रत मोहम्मद भी उनको बहुत मानते थे। उनका मुसलमान होना इतिहास की एक बड़ी घटना थी। वह हज़रत मोहम्मद की एक बड़ी जीत थी। इस्लाम की एक बड़ी विजय थी। उमर ने अपनेको बिल्कुल पैग़म्बर के हाथों में सौंप दिया। मोहम्मद साहब मदीना गये तो उनके आगे थे। लड़ाइयों में आगे रहे। सलाह देने में आगे रहे। एक आदमी अज़ान दिया करे—यह नियम उन्हींकी सलाह पर बना था।

हज़रत उमर की लड़की हफ़सह की शादी मोहम्मद साहब के साथ हुई थी। हफ़सह का पति एक लड़ाई

में मारा गया था। हज़रत उमर ने बेटी की फिर से शादी करनी चाही। वह किसी अच्छे मुसलमान को चाहते थे। उन्होंने उस्मान से कहा, उन्होंने मना कर दिया। अबूबकर से कहा, उन्होंने भी मना कर दिया। असल में उसका रूप-रंग किसीको नहीं भाता था। उस्मान और अबूबकर बड़े आदमी थे। उमर का स्वभाव तेज़ था। वह उनके मना करने पर नाराज़ हो गये। इसे इन्होंने अपनी हेटी समझा। सारे मुसलमानों में झगड़ा फैल जाने का डर था। तभी मोहम्मद साहब को पता चला। उन्होंने हफ़सह से खुद शादी करली। इस तरह झगड़ा होते-होते बच गया।

उमर मोहम्मद साहब को ईश्वर का दूत मानते थे। उनकी बात को ख़ुदा का हुक्म समझते, पर जब शंका होती तो उसे छिपाते नहीं थे। हज़रत मोहम्मद के सामने बोलने का साहस किसीमें नहीं था, पर ज़रूरत होती तो उमर पीछे न हटते। एक बार मोहम्मद साहब घर छोड़ कर अलग रहने लगे। लोगों ने समझा कि आला हज़रत ने अपनी बीवियों को तलाक़ दे दिया है। सबको बड़ा दुःख हुआ। फिर भी हज़रत से कोई कुछ पूछ न सका, पर उमर चुप नहीं बैठे। कई बार आला हज़रत से मिलने की कोशिश की, पर इजाज़त नहीं

मिली। आखिर उन्होंने दरवाजे से पुकार कर कहा, "शायद रसूले अल्लाह को शक है कि मैं हफ़सह की सिफारिश करने आया हूँ। ख़ुदा की कस्म, ऐसी बात नहीं है। अगर वह हुक्म दें तो मैं हफ़सह का सिर काट दूं।"

मोहम्मद साहब ने यह सुना तो तुरंत बुला लिया। उमर ने पूछा, "क्या आपने अपनी बीवियों को तलाक़ दे दिया है!"

आला हज़रत बोले, "नहीं।"

उमर ने कहा, "तमाम मुसलमान मस्जिद में बैठे फिकर कर रहे हैं। आप कहें तो यह बात उन्हें बता दूं।"

इस घटना से उनके साहस व सूझबूझ का पता चलता है। यह भी पता चलता है कि आला हज़रत उन्हें बहुत मानते थे।

: ३ :

मोहम्मद साहब के बाद हज़रत अबूबकर पहले ख़लीफा चुने गये। उन्होंने अरबों का राज दूर-दूर तक फैलाया। उन्होंने इस्लाम को दूर-दूर तक फैलाया। वह ऐश-आराम और शान-शौकत में नहीं फँसे। उन्होंने जीवन की सादगी नहीं छोड़ी। उन्होंने

कुल सवा दो बरस राज किया। इस छोटे-से काल में बहुत-से बड़े-बड़े काम हुए। हज़रत उमर बराबर उनके साथ रहे।

उनके बाद हज़रत उमर ख़लीफा चुने गये। उन्होंने हजरत अबूबकर के काम को आगे बढ़ाया। वह कोई दस साल ख़लीफा रहे। इस काल में सारा सीरिया, ईराक और ईरान नये अरबी राज में शामिल हो गये। उन्होंने हज़रत अबूबकर की तरह सादगी को नहीं छोड़ा। वह जनता के सेवक थे। शानशौकत से नफ़रत करते थे; लेकिन हाकिम लोग ऐश-आराम और शान-शौकत में फँसने लगे थे। कई बार उमर ने उनकी लानतमलामत की। कई बार सजा दी।

यरुसलम की लड़ाई में ईसाई हार गये। उन्होंने सुलह के लिए कहा। यह भी कहा कि उमर ख़ुद यहाँ आवें। अपने हाथ से सुलहनामा लिखें। तभी वे हथियार डालेंगे। हज़रत उमर के पास यह खबर पहुँची। वह एकदम चल पड़े। साथ में न सेना थी, न साज-सामान। एक घोड़ा था, कुछ सिपाही थे। जाबिया में उनके सरदार उनसे मिलने आये। सरदारों ने कीमती पोशाकें पहनी हुई थीं। वे शाही ठाठ से आये थे। हजरत उमर ने यह देखा तो आँखें लाल-पीली हो उठीं। घोड़े

से उतर पड़े, खूब डाँटा। यहाँ से यरुसलम पहुँचे। नगर के बाहर सेनापति ने सेना के साथ उनका स्वागत किया। उनके मामूली लिबास और सादगी को देखा तो उसे बड़ी शरम आई। सोचने लगा––ईसाई क्या कहेंगे। यह सोचकर वह एक बढ़िया घोड़ा लाया। कीमती पोशाक लाया। हज़रत ने सबकुछ देखा। बोले, "खुदा ने हमको इज्ज़त दी है। वह इस्लाम की इज्ज़त है। हमारे लिए वही काफ़ी है।" और वह उसी वेश में यरुसलम के हाकिम से मिले।

एक बार वह बाजार में घूम रहे थे। एक ओर से आवाज़ आई, "उमर, क्या तुम हाकिमों के लिए कुछ कानून बनाकर खुदा के कहर से बच सकते हो? क्या तुमको खबर है कि मिश्र का हाकिम बारीक कपड़े पहनता है? उसके दरवाज़े पर दरबान है?"

हज़रत उमर ने उसी समय इस शिकायत की खोज की। वह सच निकली। वह अफसर उसी पोशाक में उनके सामने पेश किया गया। हज़रत उमर ने वह कुरता उतरवा दिया और कम्बल का कुरता पहनाया। फिर बकरियों का एक रेवड़ मंगवाया। आज्ञा दी, "जंगल में ले जाकर चराओ।"

हाकिम मना करने का साहस न कर सका। बस

बार-बार यही कहता रहा, "इससे तो मर जाना बेहतर है।"

उसके बाद उस हाकिम ने मरते दम तक ऐसी ग़लती न की।

वह सबको बराबर समझते थे। ग़रीब और अमीर, छोटे और बड़े सबका एक दरजा था। कहा करते थे, "अल्ला नेकी और अच्छे कामों को देखता है। जन्म को नहीं देखता। उसकी नज़र में सब बराबर हैं।" वह इन बातों को कहते ही नहीं थे, मानते भी थे। वह अफसरों को भी टोकते रहते थे, आदेश देते रहते थे।

एक बार एक बड़े सरदार से उनका झगड़ा हुआ। सरदार ने उनपर मुकदमा कर दिया। वह प्रतिवादी के रूप में कचहरी पहुंचे। काजी उनका मान करने के लिए खड़े हो गये। वह अमीरुल मोमनीन थे न? इसपर वह बोले, "यह अन्याय है। मैं यहां ख़लीफा नहीं, प्रतिवादी हूं।"

वह सरदार के बराबर जा बैठे। मुकदमा पेश हुआ। सरदार के पास कोई सबूत न था। हज़रत उमर दावे से इन्कार करते थे। वादी सरदार ने उनसे कसम लेनी चाही। यह बात कानून के अनुसार ठीक थी, लेकिन

काजी ने वादी से कहा,"हजरत उमर अमीरुल मोमनीन हैं। उनसे कसम न लो।"

यह सुनकर हजरत उमर तड़प उठे, "तुम कैसे काजी हो ! तुम एक आम आदमी और उमर को बराबर नहीं समझते। इन्साफ के लिए तुमपर कैसे भरोसा किया जा सकता है ?"

जुबला सीरिया का मशहूर रईस था, बल्कि बादशाह था। वह मुसलमान हो गया था। काबे के तवाफ (परिक्रमा) में उसकी चादर का कोना एक आदमी के पैरों के नीचे आ गया। बस, उसने उस आदमी के मुंहपर तमाचा रसीद कर दिया। आदमी भी कम नहीं था। बराबर का जवाब दिया। जुबला गुस्से से काँपने लगा। सीधा हजरत उमर के पास पहुंचा। हजरत उसकी शिकायत सुनकर बोले,"तुमने जो कुछ किया था, उसकी सजा पाई।"

वह बड़ा हैरान हुआ। बोला, "हम लोगों का दरजा बड़ा है। जो हमारे साथ बेअदबी करता है, उसका सिर काट डालना चाहिए।"

हजरत उमर ने कहा, "पहले ऐसा ही होता था। पर इस्लाम ने छोटे-बड़े का भेद मिटा दिया है।"

वह बोला,"अगर इस्लाम ऐसा धर्म है, अगर उसमें

ऊँच-नीच का भेद नहीं है, तो मैं उसे नहीं मानता।"

इतना कहकर वह वहां से चला गया, लेकिन हज़रत उमर ने उसके लिए असूल को नहीं बदला।

एक बार उन्होंने हज के अवसर पर सब हाकिमों को बुलाया। उनके सामने ही जनता से पूछा, "इन हाकिमों से किसीको शिकायत हो तो बताओ ?"

एक आदमी उठा। उसने एक हाकिम का नाम लिया। कहा, "इसने मुझे बिला वजह सौ कोड़े मारे हैं।" हज़रत उमर बोले, "तुम इससे बदला लो। सबके सामने इसके भी सौ कोड़े मारो।"

सब हैरान रह गये। मिश्र के हाकिम ने कहा, "अमीरुल मोमनीन, इसका हाकिमों पर बुरा असर पड़ेगा।"

हज़रत उमर ने जवाब दिया, "तो भी यह कैसे हो सकता है कि बदला न लिया जाय ?" और उस आदमी से कहा, "अपना काम करो।"

अजीब नज़ारा था। अमीरुल मोमनीन एक मामूली आदमी से कह रहे थे, "हाकिम से बदला लो।" और हाकिम हैरान-परेशान खड़े थे। आख़िर मिश्र के हाकिम ने उस आदमी को समझाया, खुशामद की। तब कहीं उसने अपना दावा छोड़ा। बदले में उसने दो

सौ दीनार लिये।

मुसलमानों ने एक नगर का घेरा डाला था। अचानक एक दिन किले के दरवाज़े खुल गये। सिपाही हैरान थे कि यह क्या हुआ? शहर में कोई गड़बड़ नहीं। सब लोग अपने काम में लगे हैं। उन्होंने इसका कारण पूछा। शहरवालों ने कहा, "तुम नहीं जानते। तुमने ही तो जजिया की शर्त पर हमें अमन दिया है। अब क्या झगड़ा रहा?"

मुसलमान और भी हैरान हुए। किसने दिया अमन? खोज करने पर सचाई का पता लगा। एक गुलाम ने उससे बिना कहे दे दिया था।

मुसलमानों ने कहा, "एक गुलाम की ज़बान की कोई कीमत नहीं है।"

शहरवाले बोले, "हम कुछ नहीं जानते। ज़बान वाला गुलाम हो या और कोई, करार करार है।"

आख़िर बात हज़रत उमर तक पहुँची। उन्होंने कहा, "मुसलमानों का गुलाम भी मुसलमान है। वह ज़बान दे चुका, मुसलमान ज़बान दे चुके!"

: ४ :

हज़रत उमर के लिए राज करने का मतलब था सेवा करना। वह अपनेको मालिक नहीं समझते थे।

एक बार एक बड़े आदमी मिलने आये। साथ में और लोग भी थे। आकर देखा—वह आस्तीन चढ़ाये इधर-उधर दौड़ते-फिरते हैं। उन्हें देखा तो बोले, "आओ, तुम भी मेरा साथ दो।" आनेवाले ने पूछा, "ख़ैर तो है! क्या हो गया?"

बोले, "ख़जाने से एक ऊँट भाग गया है। एक ऊँट में कितने ग़रीबों का हक शामिल है।"

एक आदमी बोल उठा, "अमीरुल मोमनीन, आप क्यों परेशान हो रहे हैं? किसी गुलाम को कहिये, वह ढूंढ़ लावेगा।"

उन्होंने फौरन कहा, "मुझसे बढ़कर कौन गुलाम हो सकता है!"

वह ख़जाने को जनता का ख़जाना समझते थे। बिना पूछे उसमें से कुछ भी नहीं लेते थे। एक बार वह बीमार पड़े। शहद की ज़रूरत हुई। ख़जाने में शहद था, लेकिन बिना पूछे नहीं ले सकते थे। मस्जिद में पहुँचे। लोगों से कहा, "आप कहें तो ख़जाने से थोड़ा-सा शहद ले लूं।"

वह लोगों को यह बताना चाहते थे कि ख़जाने पर ख़लीफा का कोई अधिकार नहीं है। पहले वह तिजारत करते थे। ख़लीफा बनने के बाद ऐसा नहीं हो

सकता था। इसलिए साथियों को बुलाया। उनके सामने अपनी कठिनाई रखी। घर के लिए ख़र्चा चाहिए। तिजारत अब हो नहीं सकती। ख़जाने से पैसा लेना ही होगा। बताइये, कितना लूं।

लोगों ने अलग-अलग राय दी। कुछ तय नहीं हो रहा था। हजरत उमर ने हजरत अली की तरफ देखा। वह अबतक चुप थे। इशारा समझकर बोले, "आप सिर्फ मामूली दर्जे की ख़ुराक और लिबास ले सकते हैं।"

वह बड़ी सादगी से रहते थे। जमीन पर सोते थे। खाना बड़ा सादा खाते थे। महीनों गेहूं का आटा घर में नहीं पकता था। छानते तो कभी भी नहीं थे। कपड़े भी सादे होते अक्सर उनमें पैबन्द लगा रहता। बदन पर फटा हुआ कुरता, सिर पर फटा हुआ अमामा, पैरों में फटी हुई जूतियाँ। एक बार देर तक घर से नहीं निकले। बाहर लोग राह देख रहे थे। आये तो कारण मालूम हुआ। पहनने को कपड़े न थे, सो बदन के कपड़ों को धोया था। सूख गये तो पहन कर बाहर आये।

कभी कन्धे पर मशक लिये जा रहे हैं। बेवा औरतों के घर पानी भरना है। कभी मस्जिद के कोने में जमीन पर लेटे हैं। काम करते-करते थक गये हैं।

बार-बार बादशाही काम से सफर करते, पर साथ में न ख़ेमा, न शामियाना। न फौज, न फाटा। किसी पेड़ पर कपड़ा डाल दिया जाता। उसीकी छाँह में इस्लाम का वह महान् ख़लीफा आराम करता।

एक बार वह सीरिया गये। साथ में बस एक नौकर था। राह में आप उसके ऊँट पर सवार हो गये। शायद गलती से ऐसा हुआ था। जान-बूझ कर भी हो सकता है। जो हो, ऊँट बदल गया। उनका ऊँट कुछ सजा हुआ था। जब शहर में पहुँचे तो लोग स्वागत करने आये। बड़ा मज़ा आया। लोग नौकर की तरफ जाते। उसीको ख़लीफा समझते। वह हज़रत उमर की तरफ इशारा करता। लोग हैरान-परेशान, आख़िर ख़लीफा कौन से हैं ? बेचारे शान-शौकत ढूंढ़ते थे, पर वह हज़रत उमर के पास कहाँ मिलती !

यह बात नहीं कि वह कंजूस थे। असल में उनको लोगों के सामने मिसाल रखनी थी। ख़ुद ऐश करते तो लोगों से क्या कहते। वह जानते थे कि अफसर बिगड़ते जा रहे हैं। इसलिए अपने पर कुछ अधिक सख़्ती करते थे।

उनके स्वभाव में तेजी थी। मुसलमान होने पर भी वह कुछ बनी रही। रहन-सहन की तरह उसको भी वह माँजते रहते थे। एक बार मस्जिद में बोल रहे

थे। बोलते-बोलते कहने लगे, "कभी मैं इतना ग़रीब था कि लोगों का पानी भरा करता था। बदले में वे मुझे छुहारे देते थे। वही खाकर मैं बसर करता।"

यह कहकर वह बैठ गये। लोग बड़े हैरान हुए, "यहाँ यह कहने की क्या ज़रूरत थी?"

बोले, "मुझे कुछ ग़रूर हो गया था। यह उसकी दवा थी।"

कभी-कभी वह जनता को जाँचते थे। एक दिन उन्होंने मस्जिद में बोलते हुए कहा, "अगर मैं दुनिया की तरफ झुक जाऊँ तो तुम क्या करोगे?" एक आदमी खड़ा हो गया। उसने तलवार खींच ली। बोला, "तुम्हारा सिर उड़ा दूंगा।" हज़रत उमर ने उसे डाँट दिया, "मेरी शान में तू ऐसा कहता है!"

उसने और तेज होकर कहा, "हाँ-हाँ, तुम्हारी शान में।"

हज़रत बहुत ख़ुश हुए। बोले, "कौम में ऐसे लोग हैं तब कोई डर नहीं। बुरी राह चलूंगा तो सीधा कर लोगे।"

इन बातों का यह मतलब नहीं है कि उनमें रस नहीं था। राज के काम से फुरसत कम मिलती थी। मिलती तो जी बहलाने के कामों में भाग लेते। गाना

सुनते, कविता सुनते। रात-रातभर सुनते रहते।

हजरत उमर धर्म-चर्चा भी किया करते थे। सभाएँ जुड़ती थीं। उसमें आयतों के मतलब किये जाते थे। वहाँ भी वह बड़े-छोटे का भेद नहीं करते थे।

: ५ :

हज़रत उमर ने बहुत लड़ाइयां लड़ीं। खूब राज फैलाया, खूब इस्लाम का प्रचार किया, पर उनके विचार तंग नहीं थे। वह ईसाइयों और यहूदियों के साथ बराबरी का बर्ताव करते थे। वह उनके बरतनों में खाने-पीने को बुरा नहीं समझते थे। उन्होंने एक जगह कहा है, "ईसाई जो पनीर बनाते हैं उसे खाओ।" उन्होंने एक ईसाई औरत के घड़े के पानी से वजू किया था। वह उन लोगों को नौकर भी रखते थे। बड़े-बड़े पदों पर रखते थे।

जब वह यरुसलम गये तो ईसाइयों के नेता ने उनका जोरदार स्वागत किया। ईसाई लड़ाई में हार गये थे। उन्होंने हज़रत उमर के आने पर ही हथियार डालने को कहा था। इसीलिए वह आये थे। दोनों नेता साथ-साथ शहर में घुसे। घूमते रहे। पुराने भवनों को देखते रहे। नमाज़ का समय आया। तब वे गिरजे में थे। लाट पादरी ने कहा, "नमाज़ यहीं पढ़ लीजिये।"

हजरत उमर नहीं माने। बोले, "मैं ऐसा करूँगा तो मुसलमान मेरी नकल करेंगे।"

और उन्होंने पैड़ियों पर जाकर नमाज़ पढ़ी। वह इतने उदार थे। दूसरों का इतना ध्यान रखते थे!

उन्होंने यरुसलमवालों से ऐसी ही सुलह की। उनकी शर्तों में ये बातें थीं––उनके गिरजों में कोई नहीं रहेगा। वे गिराये नहीं जायंगे। उनके सामान में कोई कमी नहीं होगी। मज़हब के बारे में कोई ज़बरदस्ती नहीं की जायगी।

मालगुजारी वसूल करने में भी वह ज़बरदस्ती नहीं करते थे। जो यह काम करते थे, उनसे वह कसम लेते थे। बार-बार पूछते थे कि सख्ती तो नहीं की।

लड़ाई में जीतनेवाला हारे हुए को तंग करता है; लेकिन हज़रत उमर का हुक्म था कि किसीको क़त्ल न करो, बच्चों-बूढ़ों को न छेड़ो, पेड़ तक न काटो।

राज-काज के मामलों में भी वह तानाशाह नहीं थे। जो काम करते, सलाहकारों से पूछकर करते। इस काम के लिए सभाएं थीं। वह जनतंत्र को मानते थे। जनता की राय लेकर अफसर तैनात करते थे। कभी-कभी चुनाव भी होता था। जो मुसलमान नहीं होते थे, वे 'जिम्मी' कहलाते थे। जिम्मियों के बारे में जो कुछ करते उसमें

उनकी राय लेते। ईराक का सवाल उठता तो वहां के लोगों से सलाह करते थे। मिश्र की बात आती तो मिश्रवालों को बुलाते। मतलब यह कि वह अपनेको सेवक मानते थे, मालिक नहीं मानते थे। प्रजा के सभी लोगों को बराबर समझते थे। जो मुसलमान नहीं थे उनके लिए सेना में भरती होना जरूरी नहीं था। उसके बदले में वे जजिया देते थे।

जनता की भलाई के लिए हज़रत उमर ने बहुत से काम किये। बहुत-सी नहरें बनवाईं। तरह-तरह की इमारतें बनवाईं। सड़कें बनवाईं, सड़कों पर सराएं बनवाईं। कई नये शहर आबाद किये। कई पुराने शहरों को बड़ा किया। सेना में सुधार किये। ख़जाना कायम किया। अदालतें खड़ी कीं। दफ्तर-माल क़ायम किये। कुरआन को तरतीब दी। उसे अपनी देख-रेख में लिखवाया। सबसे बढ़कर बात उन्होंने यह की कि ग़ुलामी पर चोट की।

उनके समय में इस्लाम बहुत फैला। वह तलवार के जोर से नहीं फैला। उसका कारण हज़रत उमर का जीवन था। उन्होंने अपनी मिसाल से सच्चे मुसलमान पैदा किये। उन्होंने सेवक पैदा किये। उन्होंने आदमी पैदा किये—ऐसे आदमी, जिनके सीने में दिल था, दिल

में धड़कन थी, धड़कन में दूसरों का दर्द था। सादगी थी, सच्चाई थी, ईमानदारी थी, पवित्रता थी। इस्लाम के फैलने के और भी कारण थे, पर सबसे बड़ा यही था।

उनके कामों की सूची बहुत बड़ी है। उनके गुणों की गिनती करना कठिन है। उन्होंने बहुत-से देश जीते। उन्होंने बहुत-से देशों में इस्लाम की आवाज़ पहुँचाई। वह राजा थे, वह सेनापति थे, वह धर्मगुरु थे। सबसे बढ़कर वह इन्सान थे। उन्होंने बचपन में ऊंट चराये, पर जब मरे तो एक बहुत बड़े राज के राजा थे, एक बहुत बड़े धर्म के नेता थे।

बादशाह हो जाने पर भी उनके कपड़े फटे रहते। ग़रीबों के घर पहले की तरह पानी भरते। ऊँटों पर अपने हाथ से तेल मलते। बाज़ारों में अकेले घूमते। रात को गश्त लगाते। जमीन पर सो रहते।

वह दस साल ख़लीफा रहे। सन् ६४४ में उनकी मौत हुई। एक विदेशी को उनसे कुछ शिकायत थी। उसने उनके छुरा भोंक दिया। उस समय वह नमाज़ पढ़ रहे थे। हमले के बाद सबसे पहले उन्होंने एक साथी को अपनी जगह खड़ा किया। खुद गिर पड़े। उसी तरह नमाज़ पढ़ी गई। वह बेहोश पड़े रहे। बाद में घर लाया गया। इलाज हुआ, पर वह बच

नहीं सके। जब वह इस बात को जान गये तो उन्होंने बेटे को बुलाया। कहा, "आयशा के पास जाओ। कहो कि उमर उनसे इजाजत चाहता है कि उसे रसूले अल्लाह के पहलू में दफ़न किया जाय।"

बेटा आयशा के पास पहुँचा। उनसे सब बातें कहीं। आयशा हज़रत अबूबकर की लड़की और मोहम्मद साहब की बीवी थी। वह रो रही थी। रोते-रोते बोली, "वह जगह मैंने अपने लिए रख छोड़ी थी, आज मैं उमर के लिए अपना हक़ छोड़ दूँगी।"

उमर ने सुना तो बोले, "यही मेरी सबसे बड़ी आरज़ू थी।"

फिर राज-काज के बारे में कुछ नसीहत की। ख़लीफा चुनने के लिए सभा बनाई। उसके बाद अपना कर्ज़ा चुकाने के लिए बेटे को समझाया।

घायल होने के तीन दिन बाद उन्होंने इस दुनिया से कूच किया। जैसी उनकी चाह थी, उनको आला हज़रत के पहलू में ही दफ़न किया गया। उस दिन मोहर्रम की पहली तारीख़ और हफ्ते का दिन था।

इस तरह वह सूरज मिट्टी में छिप गया; लेकिन उसकी चमक आज तक दुनिया को राह दिखा रही है।

आमीन !

समाज-विकास-माला की पुस्तकें

१. बद्रीनाथ
२. जंगल की सैर
३. भीष्म पितामह
४. शिवि और दधीचि
५. विनोबा और भूदान
६. कबीर के बोल
७. गांधीजी का विद्यार्थी-जीवन
८. गंगाजी
९. गौतम बुद्ध
१०. निषाद और शबरी
११. गांव सुखी, हम सुखी
१२. कितनी जमीन ?
१३. ऐसे थे सरदार
१४. चैतन्य महाप्रभु
१५. कहावतों की कहानियां
१६. सरल व्यायाम
१७. द्वारका
१८. बापू की बातें
१९. बाहुबली और नेमिनाथ
२०. तन्दुरुस्ती हजार नियामत
२१. बीमारी कैसे दूर करें ?
२२. माटी की मूरत जागी
२३. गिरिधर की कुंडलियां
२४. रहीम के दोहे
२५. गीता-प्रवेशिका
२६. तुलसी-मानस-मोती
२७. दादू की वाणी
२८. नजीर की नज्में
२९. संत तुकाराम
३०. हजरत उमर
३१. बाजीप्रभु देशपांडे
३२. तिरुवल्लुवर
३३. कस्तूरबा गांधी
३४. शहद की खेती
३५. कावेरी
३६. तीर्थराज प्रयाग
३७. तेल की कहानी
३८. हम सुखी कैसे रहें ?
३९. गो-सेवा क्यों ?
४०. कैलास-मानसरोवर
४१. अच्छा किया या बुरा ?
४२. नरसी महेता

मूल्य प्रत्येक का छः आना



सस्ता साहित्य मण्डल

३०

छः आना